एस. एन. एस. आर.के.एस. कॉलेज, सहरसा

(सम्बद्ध बी.एन. मंडल यूनिवर्सिटी, मधेपुरा, बिहार)

****

ऑनलाइन शिक्षण

****

प्रस्तुति : डॉ रिपुंजय कुमार सिंह (हिंदी विभाग,एस. एन. एस. आर.के.एस. कॉलेज, सहरसा)

****

अध्ययन व विश्लेषण शिक्षण

भाग-46

****

Scanned by CamScanner

बी.ए. (ऑनर्स) हिंदी, प्रथम वर्ष

****

प्रथम पत्र

****

तुलसीदास

****

'रामचरितमानस'- अयोध्या काण्ड

****

Scanned by CamScanner

[अयोध्या काण्ड मूल-पाठ व्याख्या/ विश्लेषण (शेष भाग-45 से आगे....)]

दो० - भूमि सयन बलकल बसन असनु कंद फल मूल।

ते कि सदा सब दिन मिलहिं सबुइ समय अनुकूल॥ 62॥

जमीन पर सोना, पेड़ों की छाल के वस्त्र पहनना और कंद, मूल, फल का भोजन करना होगा। और वे भी क्या सदा सब दिन मिलेंगे? सब कुछ अपने-अपने समय के अनुकूल ही मिल सकेगा॥ 62॥

नर अहार रजनीचर चरहीं। कपट बेष बिधि कोटिक करहीं॥

लागइ अति पहार कर पानी। बिपिन बिपति नहिं जाइ बखानी॥

Scanned by CamScanner

मनुष्यों को खानेवाले निशाचर (राक्षस) फिरते रहते हैं। वे करोड़ों प्रकार के कपट-रूप धारण कर लेते हैं। पहाड़ का पानी बहुत ही लगता है। वन की विपत्ति बखानी नहीं जा सकती।

ब्याल कराल बिहग बन घोरा। निसिचर निकर नारि नर चोरा॥
डरपहिं धीर गहन सुधि आएँ। मृगलोचनि तुम्ह भीरु सुभाएँ॥

वन में भीषण सर्प, भयानक पक्षी और स्त्री-पुरुषों को चुरानेवाले राक्षसों के झुंड-के-झुंड रहते हैं। वन की (भयंकरता) याद आने मात्र से धीर पुरुष भी डर जाते हैं। फिर हे मृगलोचनि! तुम तो स्वभाव से ही डरपोक हो!

हंसगवनि तुम्ह नहिं बन जोगू। सुनि अपजसु मोहि देइहि लोगू॥
मानस सलिल सुधाँ प्रतिपाली। जिअइ कि लवन पयोधि मराली॥

Scanned by CamScanner

हे हंसगामिनी! तुम वन के योग्य नहीं हो। तुम्हारे वन जाने की बात सुनकर लोग मुझे अपयश देंगे (बुरा कहेंगे)। मानसरोवर के अमृत के समान जल से पाली हुई हंसिनी कहीं खारे समुद्र में जी सकती है।

नव रसाल बन बिहरनसीला। सोह कि कोकिल बिपिन करीला॥

रहहु भवन अस हृदयँ बिचारी। चंदबदनि दुखु कानन भारी॥

नवीन आम के वन में विहार करनेवाली कोयल क्या करील के जंगल में शोभा पाती है? हे चंद्रमुखी! हृदय में ऐसा विचारकर तुम घर ही पर रहो। वन में बड़ा कष्ट है।

दो॰ - सहज सुहृद गुर स्वामि सिख जो न करइ सिर मानि।

सो पछिताइ अघाइ उर अवसि होइ हित हानि॥ 63॥

Scanned by CamScanner

स्वाभाविक ही हित चाहनेवाले गुरु और स्वामी की सीख को जो सिर चढ़ाकर नहीं मानता, वह हृदय में भरपेट पछताता है और उसके हित की हानि अवश्य होती है॥ 63॥

सुनि मृदु बचन मनोहर पिय के। लोचन ललित भरे जल सिय के॥

सीतल सिख दाहक भइ कैसें। चकइहि सरद चंद निसि जैसें॥

प्रियतम के कोमल तथा मनोहर वचन सुनकर सीता के सुंदर नेत्र जल से भर गए। राम की यह शीतल सीख उनको कैसी जलानेवाली हुई, जैसे चकवी को शरद ऋतु की चाँदनी रात होती है।

उतरु न आव बिकल बैदेही। तजन चहत सुचि स्वामि सनेही॥

बरबस रोकि बिलोचन बारी। धरि धीरजु उर अवनिकुमारी॥

Scanned by CamScanner

जानकी से कुछ उत्तर देते नहीं बनता, वे यह सोचकर व्याकुल हो उठीं कि मेरे पवित्र और प्रेमी स्वामी मुझे छोड़ जाना चाहते हैं। नेत्रों के जल (आँसुओं) को जबरदस्ती रोककर वे पृथ्वी की कन्या सीता हृदय में धीरज धरकर,

लागि सासु पग कह कर जोरी। छमबि देबि बड़ि अबिनय मोरी।

दीन्हि प्रानपति मोहि सिख सोई। जेहि बिधि मोर परम हित होई॥

सास के पैर लगकर, हाथ जोड़कर कहने लगीं - हे देवि! मेरी इस बड़ी भारी ढिठाई को क्षमा कीजिए। मुझे प्राणपति ने वही शिक्षा दी है, जिससे मेरा परम हित हो।

मैं पुनि समुझि दीखि मन माहीं। पिय बियोग सम दुखु जग नाहीं॥

Scanned by CamScanner

परंतु मैंने मन में समझकर देख लिया कि पति के वियोग के समान जगत में कोई दुःख नहीं है।

(शेष अध्ययन व विश्लेषण भाग- 47 में...)

Scanned by CamScanner